प्रकाशन हेतु अनुमोदित

छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर

रिट याचिका (सिविल) क्रमांक 5781/2006

दिनेश जोशी

बनाम

अरुण कुमार एवं अन्य

....

उपस्थितिः

याचिकाकर्ता की ओर से श्री पंकज श्रीवास्तव, अधिवक्ता ।

....

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

मौखिक

आदेश (दिनांक 12.01.2007)

सुनील कुमार सिन्हा, न्यायाधीश,

(1) भारत के संविधान का अनुच्छेद 227 के अंतर्गत प्रस्तुत इस रिट याचिका द्वारा, याचिकाकर्ता ने दिनांक 20.09.2006 को पारित आदेश की वैधता, औचित्य एवं विधिमान्यता को चुनौती दी है, जो सिविल वाद क्रमांक 04-B/2005 में अतिरिक्त जिला न्यायाधीश, सक्ती द्वारा पारित किया गया था। उक्त आदेश के माध्यम से, माननीय अतिरिक्त जिला न्यायाधीश ने याचिकाकर्ता/प्रतिवादी क्रमांक 2 द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अंतर्गत प्रस्तुत आवेदन, साथ ही लिखित कथन एवं दस्तावेज, जिन्हें वैधानिक अवधि समाप्त होने के पश्चात अभिलेख पर लेने की अनुमति हेतु प्रस्तुत किया गया था, को अस्वीकार कर दिया। यह आवेदन उस समय प्रस्तुत किया गया था जब विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 26.04.2006 को सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश VIII नियम 1 के अंतर्गत प्रतिवादी का लिखित कथन प्रस्तुत करने का अधिकार समाप्त कर दिया गया था।

(2) याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने तर्क दिया कि याचिकाकर्ता/प्रतिवादी क्रमांक 2 को उक्त सिविल वाद में दिनांक 17.08.2005 को समन की तामिली हुई थी तथा उनके अधिवक्ता ने 24.08.2005 को वकालतनामा एवं पता दर्ज कराया। उन्हें सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश VIII नियम 1 के अनुसार 30 दिनों के भीतर तथा न्यायालय द्वारा अधिकतम 90 दिनों की विस्तारित अवधि के भीतर लिखित कथन प्रस्तुत करना था, किन्तु कुछ कठिनाइयों के कारण वे ऐसा नहीं कर सके, जिनका उल्लेख सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अंतर्गत प्रस्तुत आवेदन में किया गया था। यह भी तर्क दिया गया कि विचारण न्यायालय ने विधि के प्रावधानों का समुचित अवलोकन किए बिना तथा प्रतिवादी क्रमांक 2 द्वारा समय पर लिखित कथन प्रस्तुत न कर पाने के कारणों पर विचार किए बिना, उक्त आवेदन को अस्वीकार कर दिया और वाद को दिनांक 05.10.2006 को वादी के साक्ष्य हेतु निर्धारित कर दिया। यह भी उल्लेख किया गया कि अन्य प्रतिवादी (प्रतिवादी क्रमांक 1, 3 एवं 4) के विरुद्ध एकपक्षीय कार्यवाही की जा चुकी थी तथा प्रतिवादी क्रमांक 5 ने भी लिखित कथन प्रस्तुत नहीं किया था, अतः वाद को साक्ष्य हेतु नियत किया गया।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(3) अभिलेखों के अवलोकन से स्पष्ट है कि यह वाद क्षतिपूर्ति से संबंधित था, जिसमें वादी ने प्रतिवादियों के विरुद्ध 1,61,292/- रुपये की राशि का दावा किया था। इस वाद में एकमात्र प्रतिवादी जो वाद का प्रतिवाद कर रहा था, अर्थात् प्रतिवादी क्रमांक 2, को सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश VIII नियम 1 के अंतर्गत उसका अधिकार समाप्त कर दिए जाने के कारण लिखित कथन प्रस्तुत करने से वंचित कर दिया गया।

(4) याचिकाकर्ता के अधिवक्ता ने तर्क दिया कि विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश VIII नियम 1 के प्रावधानों के अनुरूप नहीं है। न्यायालय को सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 151 के अंतर्गत प्रस्तुत आवेदन में उल्लिखित कारणों पर विचार करते हुए याचिकाकर्ता को अवसर प्रदान करना चाहिए था तथा उसके द्वारा प्रस्तुत लिखित कथन को अभिलेख पर स्वीकार करना चाहिए था। इस

संदर्भ में उन्होंने सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय **कैलाश बनाम नन्हकू एवं अन्य (2005) 4 एससीसी 480** का भी उल्लेख किया।

(5) मैंने याचिकाकर्ता के अधिवक्ता को विस्तार से सुना तथा रिट याचिका के अभिलेखों का अवलोकन किया।

(6) सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश VIII नियम 1 में लिखित कथन प्रस्तुत करने संबंधी प्रावधान किए गए हैं। इसके अनुसार, प्रतिवादी को समन की तामिलह की तिथि से 30 दिनों के भीतर अपना लिखित कथन प्रस्तुत करना होता है। इसके साथ एक उपबंध भी जोड़ा गया है, जिसके अनुसार यदि प्रतिवादी उक्त 30 दिनों की अवधि में लिखित कथन प्रस्तुत करने में असफल रहता है, तो न्यायालय कारण लिखित रूप में दर्ज करते हुए उसे एक अन्य तिथि तक लिखित कथन प्रस्तुत करने की अनुमति दे सकता है, किन्तु यह अवधि समन की तामिली की तिथि से 90 दिनों से अधिक नहीं हो सकती। इस विषय पर सर्वोच्च न्यायालय द्वारा ***कैलाश बनाम नन्हकू*** प्रकरण में विचार किया गया तथा कंडिका 27 में निम्नलिखित तीन बातें स्पष्ट की गईं—

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(i) सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश VIII नियम 1 का सावधानीपूर्वक अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि यह प्रतिवादी पर 30 दिनों के भीतर तथा अधिकतम 90 दिनों की विस्तारित अवधि के भीतर लिखित कथन प्रस्तुत करने का दायित्व डालता है। यह प्रावधान न्यायालय की शक्ति को सीमित नहीं करता और न ही न्यायालय को निर्धारित अवधि के पश्चात प्रस्तुत लिखित कथन को अभिलेख पर लेने की शक्ति से वंचित करता है।

(ii) यह प्रावधान प्रक्रियात्मक प्रकृति का है, न कि मूल विधि का हिस्सा।

(iii) इस प्रावधान का उद्देश्य अनैतिक प्रतिवादियों द्वारा अपनाई जाने वाली विलंबकारी रणनीतियों पर रोक लगाना तथा वादों के शीघ्र निपटारे को सुनिश्चित करना है। इसका उद्देश्य न्यायिक प्रक्रिया को बाधित करना नहीं, बल्कि उसे

त्वरित करना है। न्याय की प्रक्रिया को शीघ्र किया जा सकता है, किन्तु न्याय की मूल भावना—निष्पक्षता—को समाप्त नहीं किया जा सकता।

(7) उपर्युक्त निर्णय के कंडिका 28 में कहा गया है कि समस्त प्रक्रियात्मक नियम न्याय के सहायक होते हैं। प्रक्रियात्मक विधि के प्रारूपकार द्वारा प्रयुक्त भाषा उदार या कठोर हो सकती है, किन्तु यह तथ्य बना रहता है कि प्रक्रिया निर्धारित करने का उद्देश्य न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाना है। प्रतिद्वंद्वी प्रणाली में सामान्यतः किसी भी पक्षकार को न्याय वितरण की प्रक्रिया में भाग लेने के अवसर से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। जब तक किसी विधि में स्पष्ट एवं विशिष्ट शब्दों द्वारा बाध्यता न हो, तब तक सिविल प्रक्रिया संहिता अथवा किसी अन्य प्रक्रियात्मक अधिनियम के प्रावधानों की ऐसी व्याख्या नहीं की जानी चाहिए जिससे न्यायालय असाधारण परिस्थितियों में न्याय करने में असहाय हो जाए। उच्चतम न्यायालय ने इस संदर्भ में सुशील कुमार सेन बनाम बिहार राज्य (1975) 1 एससीसी 774 में न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर द्वारा व्यक्त विचारों का भी उल्लेख किया, जो इस प्रकार हैं—

WebCopy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

"विधि के अनुसार न्याय की हानि एक न्यायाधीश के अंतःकरण को विचलित करती है और विधि सुधारक के समक्ष एक गंभीर प्रश्नचिह्न खड़ा करती है।

कुछ व्यवस्थाओं में प्रक्रियात्मक विधि इतनी प्रभावी हो जाती है कि वह मूल अधिकारों और वास्तविक न्याय पर हावी हो जाती है। यह मानवीय सिद्धांत कि प्रक्रिया न्याय की दासी होनी चाहिए, स्वामिनी नहीं, इस बात पर विचार करने को प्रेरित करता है कि न्यायाधीशों को अवशिष्ट शक्ति प्रदान की जाए ताकि वे *न्याय के कर्तव्य के रूप* के आधार पर कार्य कर सकें, जहाँ अन्यथा परिणाम पूर्णतः अन्यायपूर्ण हो सकता है।

न्याय ही न्यायशास्त्र का लक्ष्य है—चाहे वह प्रक्रियात्मक हो या मूल विधि।"

(8) उपर्युक्त सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधि तथा सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश VIII नियम 1 के प्रावधानों से स्पष्ट है कि विधि-निर्माताओं द्वारा निर्धारित व्यवस्था कहीं भी न्यायालय की उस शक्ति को सीमित नहीं करती, जिसके अंतर्गत वह

उपयुक्त मामलों में 30 दिनों की अवधि अथवा 90 दिनों की विस्तारित अवधि के पश्चात भी लिखित कथन प्रस्तुत करने हेतु युक्तियुक्त समय प्रदान कर सके। चूँकि सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश VIII नियम 1 के प्रावधान प्रक्रियात्मक प्रकृति के हैं, अतः न्याय के उद्देश्य की पूर्ति हेतु उपयुक्त मामलों में इस प्रकार का अधिकार प्रयोग करना न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में पूर्णतः निहित है।

न्यायालय में सदैव यह अंतर्निहित शक्ति होती है कि वह न्याय की उन्नति के लिए, विधि के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए, अपना अधिकार क्षेत्र प्रयोग करे, बशर्ते कि ऐसे अधिकार के प्रयोग पर कोई स्पष्ट विधिक प्रतिबंध न हो।

(9) वर्तमान प्रकरण में, विचारण न्यायालय ने सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश VIII नियम 1 के प्रावधानों का समुचित विचार किए बिना, अर्थात् याचिकाकर्ता द्वारा समय पर लिखित कथन प्रस्तुत न कर पाने के कारणों पर विचार किए बिना, केवल इस आधार पर आक्षेपित आदेश पारित कर दिया कि उक्त प्रावधानों में निहित समय-सीमा का पालन नहीं किया गया, अतः याचिकाकर्ता का लिखित कथन प्रस्तुत करने का अधिकार समाप्त हो गया।

Web Copy High Court of Chhattisgarh Bilaspur

(10) उपर्युक्त सर्वोच्च न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों तथा सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश VIII नियम 1 के प्रावधानों के आलोक में, विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश स्थायी नहीं रह सकता, क्योंकि विचारण न्यायालय ने इस तथ्य को पूर्णतः अनदेखा कर दिया कि वाद प्रारंभिक अवस्था में था तथा याचिकाकर्ता/प्रतिवादी क्रमांक 2, जो एकमात्र प्रतिवादी था जो वाद का प्रतिवाद कर रहा था, ने लिखित कथन प्रस्तुत करने में हुई विलंब के लिए युक्तियुक्त कारण प्रस्तुत किए थे। विचारण न्यायालय को चाहिए था कि वह लिखित कथन को अभिलेख पर स्वीकार करता और तत्पश्चात विधि अनुसार वाद की कार्यवाही आगे बढ़ाता। न्यायालय को यह भी विचार करना चाहिए था कि 90 दिनों से अधिक समय की मांग लिखित रूप में की गई थी और ऐसी स्थिति में प्रस्तुत तथ्यों पर विचार करते हुए समयावधि बढ़ाकर लिखित कथन को अभिलेख पर स्वीकार किया जाना चाहिए था, जो नहीं किया गया।

(11) उपर्युक्त तथ्यों के दृष्टिगत, यह याचिका स्वीकार की जाती है। विचारण न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश को निरस्त किया जाता है, इस शर्त के साथ कि प्रतिवादी क्रमांक 2/याचिकाकर्ता वादी को 1000/- (एक हजार रुपये) की राशि विलंब के कारण व्यय के रूप में अदा करेगा। उक्त राशि आज से 3 सप्ताह की अवधि के भीतर विचारण न्यायालय में जमा/अदा किए जाने पर ही प्रतिवादी द्वारा प्रस्तुत लिखित कथन अभिलेख पर स्वीकार किया जाएगा।

(12) यह स्पष्ट किया जाता है कि यह आदेश विपक्षी पक्ष को सुने बिना एकपक्षीय पारित किया गया है। अतः यदि विपक्षी पक्ष को इस आदेश से किसी प्रकार की आपत्ति हो, तो उन्हें विधि के प्रावधानों के अंतर्गत उपयुक्त कार्यवाही करते हुए इस न्यायालय के समक्ष अपनी आपत्ति प्रस्तुत करने की स्वतंत्रता होगी।

(13) उपर्युक्त निर्देशों की सीमा तक याचिका स्वीकार की जाती है तथा इसका अंतिम निराकरण किया जाता है।

Web Copy
High Court of Chhattisgarh
Bilaspur

(14) कोई वाद व्यय नहीं।

सही/-

(सुनील कुमार सिन्हा)

न्यायाधीश

अस्वीकरणः हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्षकारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालयीन एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु **निर्णय का अंग्रेजी स्वरुप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।**